E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

अनुबन्ध चतुष्टय-*क) अधिकारी*

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

अधिकारी को व्याख्यायित करते हुए वेदान्तसारकार का कहना है कि-

"अधिकारी तु विधिवदधीतवेदवेदाङ्गत्वेनापाततोऽधिगताखिलवेदार्थोऽस्मिन् जन्मनि जन्मान्तरे वा काम्यनिषिद्धवर्जनपुरःसरं नित्यनैमित्तिकप्रायश्चित्तोपासनानुष्ठानेन निर्गत निखिलकल्मषतया नितान्तनिर्मलस्वान्तः साधनचतुष्टम सम्पन्नः प्रमाता"।

अर्थात् जो पुरुष वेदों और वेद के अङ्गभूत शास्त्रों का विधिवत् अध्ययन कर सम्पूर्ण वेदार्थ का आपातज्ञान प्राप्त कर लेता है तथा इस जन्म में अथवा पूर्वजन्म में काम्य निषिद्ध कर्मों का त्याग करते हुये नित्य, नैमित्तिक कर्म, प्रायश्चित और उपासना के अनुष्ठान से समस्त कल्मष को निवृत्त कर अपने अन्तः करण को नितान्त निर्मल बना लेता है एवं साधन चतुष्टय से सम्पन्न होता है, ऐसा प्रमाता ही अधिकारी होता है।

वेदान्त विद्या का अधिकारी होने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य सर्वप्रथम प्रमाता हो। प्रमाता होने का अर्थ है लौकिक और वैदिक व्यवहारों में अभ्रान्त होना, यथार्थ ज्ञान के आधार पर ही लौकिक और वैदिक व्यवहारों का सम्पादन करना।

किन्तु यह ध्यान रखना है कि वेदान्त विद्या का अधिकार प्राप्त करने के लिये केवल प्रमाता होना ही पर्याप्त नहीं है, अपितु ब्रह्मविचार के लिये अपेक्षित शम, दम आदि वक्ष्यमाण चार साधनों से सम्पन्न होना आवश्यक है।

उपर्युक्त चीजें तभी सम्भव हो सकती हैं जब मनुष्य का मन नितान्त निर्मल हो और यह निर्मलता भी तभी हो सकती है जब मन के वे सभी मलपूर्ण रूप से निवृत्त हो जायें जिनके कारण मनुष्य नित्यानित्य वस्तुओं का विवेक नहीं कर पाता, सांसारिक विषयों में अनासक्त नहीं हो पाता; शम,

दम आदि सद्गुणों का विकास नहीं कर पाता तथा जगत् के उपद्रवों को सह सकने की क्षमता नहीं प्राप्त कर पाता।

मन के ऐसे मलों को दूर करने का साधन है नित्य नैमित्तिक कर्मों का, पाप-कर्मों के प्रायश्चितों का तथा उपासनाओं का अनुष्ठान, पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इन अनुष्ठानों से भी मन के मलों का निराकरण एवं मन का निर्मलीकरण तब तक नहीं हो सकता, जब तक मनुष्य काम्य और निषिद्ध कर्मों से विरत नहीं हो जाता। अतः यह आवश्यक है कि उक्त अनुष्ठानों से पूर्व काम्य और निषिद्ध कर्मों का परित्याग कर दिया जाए।

किन्तु उक्त दोनों बातें काम्य आदि कर्मों का परित्याग और नित्यादि कर्मों का अनुष्ठान-उन कर्मों की जानकारी के बिना नहीं हो सकता और उनकी जानकारी वेदों और वेदाङ्गों का विधिवत् अध्ययन कर वेदार्थ का ज्ञान प्राप्त किए बिना नहीं हो सकती। वेद चार हैं- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद।वेदाङ्ग ६ हैं-

"शिक्षा कल्पो व्याकरण निरुक्तं ज्योतिषां गतिः।

छन्दसां लक्षणं चैव षडङ्गो वेद उच्यते"।।

इस सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि वेदाध्ययन, वेदार्थ ज्ञान और काम्य निषिद्ध कर्मों का त्याग करते हुये नित्य, नैमित्तिक आदि कर्मों का अनुष्ठान, यह सब कार्य वर्तमान जन्म में उसी मनुष्य के आवश्यक होते हैं जो पूर्व जन्म में इन कार्यों का सम्पादन किये नहीं होता है। किन्तु जो व्यक्ति इन कार्यों को पूर्व जन्म में ही सम्पन्न कर लिये होता है उसे वर्तमान जन्म में इन कार्यों की अपेक्षा नहीं होती। यही कारण है कि जिन मनुष्यों को वर्तमान जीवन में द्विजकुल में जन्म न होने से वेदाध्ययन और वैदिक कर्मों का अधिकार नहीं होता, किन्तु सांसारिक विषयों में अनासक्ति आदि से उनकी पूर्वजन्मार्जित मनःशुद्धि प्रमाणित होती है, वे वेदाध्ययन एवं वैदिक कर्मों के अनुष्ठान के बिना ही सीधे ब्रह्मज्ञान के अधिकारी हो जाते हैं, महाभारत काल के विदुर आदि इसी प्रकार के अधिकारी थे।

जिन मनुष्यों का चित्त सहज शुद्ध नहीं होता, संसार की विभिन्न उपलब्धियों के लिए जिनका चित्त सांसारिक विषयों में ही चक्कर काटता रहता है, उन्हें चित्तशुद्धि के लिए उक्त उपायों का अनुष्ठान

अनिवार्य रूप से अपेक्षित है, अतः उन्हें अधिकारानुसार वेद, वेदाङ्ग के अध्ययन द्वारा वेदार्थ ज्ञान का अर्जन और काम्य निषिद्ध कर्मों का त्याग तथा नित्य नैमित्तिक आदि कर्मों का अनुष्ठान कर चित्त शुद्धि का सम्पादन करना आवश्यक होता है। यह तथ्य भी दृष्टि में रखना आवश्यक है कि वेद-वेदाङ्ग का समुचित अध्ययन और वेदार्थ का यथोचित ज्ञान विधिवत् अध्ययन से ही सम्पन्न हो सकता है।

यहाँ यह ध्यातव्य है कि वस्तुतः अन्तः करण के निर्मल होने के लिये केवल एक ही जन्म की साधना पर्याप्त नहीं। गीता भी इसी का समर्थन करती है-

"अनेकजन्मसंसिद्धिस्ततो याति परां गतिम्"।

द्विजकुलोत्पन्न व्यक्ति द्वारा उपनयन के बाद गुरु के निकट रहकर ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करते हुये शास्त्रोक्त रीति से वेद का अध्ययन ही विधिवत् अध्ययन है। इसके अतिरिक्त भी एक अर्थ है- विधि वचन से प्रयुक्त वेदाध्ययन।

विशेष-

गौतमबुद्ध ने एक बार कहा था कि इस जन्म में भी ब्रह्मभाव प्राप्त हो सकता है-

"इहासने शुष्यतु मे शरीरं त्वगस्थिमांसं प्रलयं च यातु।
अप्राप्यबोधं बहुकल्पदुर्लभं नैवासनात् कामनश्चलिप्यते"।।

वस्तुतः मनुष्य को मुक्त होने के लिये समय की कोई सीमा नहीं है। राजा परीक्षित तो केवल एक सप्ताह में ब्रह्मभाव को प्राप्त हो गये। श्रीमद् भागवत में कहा गया है-

"खट्वाङ्गो नाम राजर्षिज्ञात्वेयत्तामिहायुषः।
मुहूर्त्तात्सर्वमुत्सृज्य गतवानभयं हरिम्।।

श्रीमद्भगवद्गीता भी कहती है-

"नेहामिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते"।

नोट- काम्य, निषिद्ध, नित्य, नैमित्तिक, प्रायश्चित, उपासना और साधनचतुष्टय का विवेचन आगे के ब्लाग में किया जायेगा।